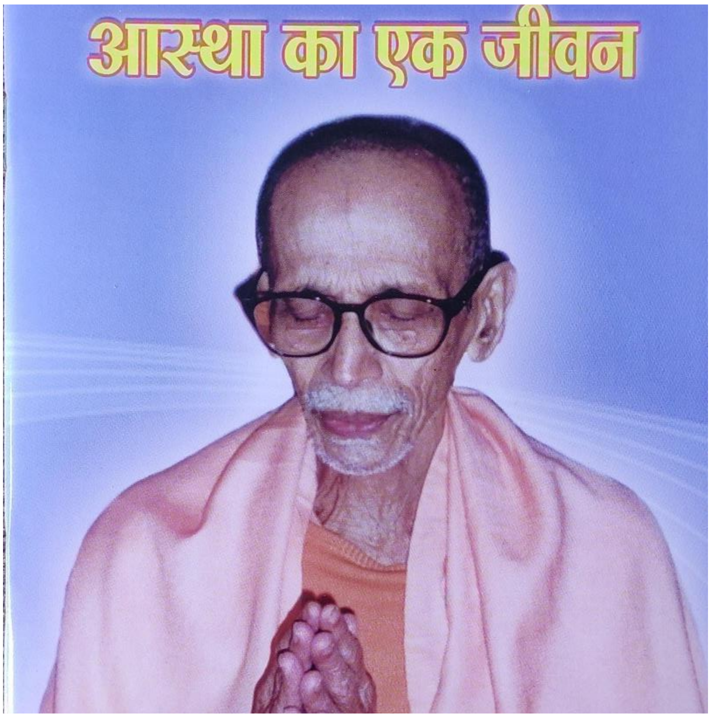

त्याग

शरणागति और आस्था का एक जीवन

स्वामी चिदानन्द

सही रूपान्तरण
मेधा सचदेव

प्रकाशक
द डिवाइन लाइफ सोसायटी
पत्रालय : शिवानन्दनगर-२४९ १९२ जिला :
टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत
www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण : २००४
द्वितीय हिन्दी संस्करण : २०१६
(५०० प्रतियाँ)

© द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

HC 54

Price: 25/-

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर-२४९ १९२,
जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit : disbooks.org

दो शब्द

(संकलनकर्ता के)

जनवरी २००२ में उड़ीसा के कटक में द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ सम्मेलन सम्पन्न करने के उपरान्त परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज शिवानन्द आश्रम (ऋषिकेश) लौटे। परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के समाधि मन्दिर में सदैव की भाँति उन्होंने पुनः अपने पावन प्रवचनों की वर्षा प्रारम्भ की।

नित्य प्रातः नवीन विषय पर प्रवचन देना पूज्य स्वामी जी महाराज का स्वभाव रहा है; किन्तु इस बार स्वामी जी महाराज ने मध्यकालीन युग के महान् महाराष्ट्री (मराठी) सन्तों के जीवन तथा उपदेशों पर आधारित अपनी प्रवचन-श्रृंखला प्रस्तुत की। मराठा सम्राट् शिवाजी के गुरु वीतराग संन्यासी एवं सन्त, समर्थ स्वामी रामदास की पाकेट बुक 'मनाचे श्लोक' में से एक-एक श्लोक की व्याख्या स्वामी जी महाराज नित्य करने लगे। ये श्लोक मन को सम्बोधित थे।"

ये उपदेश इतने प्रेरणाप्रद थे कि हमने उद्धरणों का अभिलेखन प्रारम्भ कर दिया और मित्रों के साथ चर्चा करने लगे। एक दिन एक सहयोगी साधक ने संन्यास की चर्चा करते हुए स्वीकार किया कि वह वास्तव में संन्यास (परित्याग) के विषय में कुछ नहीं जानता। कुछ विचार कर हमने कहा- "किन्तु, इन दिनों प्रातः स्वामी जी महाराज इसी विषय पर ही तो 'बोल रहे हैं। अन्ततोगत्वा, इसका अभिप्राय है-समर्पण और आस्था का जीवन। हम तुम्हें उद्धरणों का संग्रह पठनार्थ देंगे।" वे उद्धरण इतने बुद्धिगम्य सिद्ध हुए कि विचार आया- "क्यों न समय पर शिवरात्रि के लिए एक पूर्ण संग्रह तैयार किया जाये।"

कुछ उद्धरण तो मूल पुस्तक में से स्वामी जी महाराज की व्याख्या हैं, कुछ परिचयात्मक हैं और अन्य उनके अपने उपदेश हैं। "Loving Adorations to Gurudev" तथा "Worshipful Homage to the Supreme" में से भी कतिपय प्रोज्वल लेखांश हमने इस पुस्तक में लिये हैं, जिन पुस्तकों से स्वामी जी महाराज अपना दैनिक प्रवचन प्रारम्भ करते थे। आशा है, आप भी समान रूप से इन लेखांशों से युक्त इस पुस्तिका, जो कि "Renunciation a Life of Surrender and Trust” का 'सही रूपान्तरण' है, से सहायता और प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

१ मार्च २००२

विषय-सूची

दो शब्द 2
१. सादर बन्दन 4
२. परित्याग का परिणाम 6
३.संन्यास का आह्वान 7
४. संन्यास का जीवन........ 13
५.संन्यास का वास्तविक स्वरूप........ 24
६. गुरुदेव : एक आदर्श-संन्यास में 24

१. सादर बन्दन

उस अचिन्त्यं असीम परम दिव्य वैश्विक सत्ता को सादर वन्दन जो कोटि-कोटि, अरबों-खरबों ब्रह्माण्डों की सृष्टि, स्थिति और लय का मूल कारण है। विशालता के अगाध सागर में इनकी अभिव्यक्ति का आभास सर्वव्यापक दिव्य चेतना को नहीं होता। ऐसी उस प्रभु की सर्वातिरिक्तता (Transcendence) है, विशालता है, कल्पनातीत आश्चर्यजनक असीमता है।

वाणी द्वारा जिसे बताने का प्रयास किया जाता है, मात्र उसका श्रवण करके उसे समझना और आचार में लाना कठिन है। इसका वास्तविक निहितार्थ ग्रहण करना सरल नहीं है। इस पर सतत एकाग्रतापूर्वक ध्यान के द्वारा ही व्यक्ति उस विस्मयकारक असीम तत्त्व के आभ्यन्तर स्वरूप का थोड़ा-सा ज्ञान प्राप्त कर सकता है। मनन करो, ध्यान करो, मनन करो, ध्यान करो, मनन करो, ध्यान करो-कोई विचार उदित हो सकता है। मानवीय मस्तिष्क की योग्यता, भाषा का विस्तार और शब्द- ज्ञान की अपेक्षा वह भी अपेक्षाकृत पूर्व-तैयारी (योजना) का रूप ही होगा। सम्भव है कोई झलक मिल जाये, थोड़ा ज्ञान हो जाये। सावधानीपूर्वक सतत अभ्यास के द्वारा अपनी भाषा की नितान्त सीमा-पर्यन्त जहाँ हम विचारों को समझने की योग्यता रखते हों, सम्भव है कुछ सीमा तक हम कुछ ग्रहण कर सकें। अन्यथा मूलरूपेण ससीम जीवात्मा असीम परमात्मा को जानने में असमर्थ है। अशाश्वत, शाश्वत सत्ता को कैसे जान सकती है? अनेक मिल कर उस एक का साक्षात्कार नहीं कर करते।

उस अपरिमेय अनन्त अद्वैत परमेश्वर के लिए तो अनायास ही समस्त ज्ञान सम्भव है। सम्पूर्ण समष्टि को वह परमेश्वर एक बार में एक ही दृष्टिपात में जान सकता है; क्योंकि वह नित्य है, शाश्वत है, उसके लिए कुछ भी अज्ञेय नहीं है।

ॐ ॐ ॐ

समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त उस अद्वैत परम देव को सादर वन्दन जो सब धर्मों में वर्णित अपने विभिन्न स्वरूपों का मूल स्रोत है। आराधन उस अचिन्त्य, सर्वोच्च सत्य सत्ता का, जो प्रचलित धर्मों में किसी भी प्रकार की बोधगम्य विचारधारा से परे है। परमात्मा ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर्ता है, हिन्दुओं की इस विचारधारा से वह अगम्य है। यहूदियों के जेहोवा जोरोस्ट्रियन के आहुर माज़दा, ताओइस्ट के ताओ, स्वर्ग में सर्वशक्तिमान् पिता- ईसामसीह ने जिसकी प्रार्थना की थी और इस्लाम धर्म के प्रवर्तक मोहम्मद ने जिसे अल्लाह कहके पुकारा, इन सबसे भी वह अतीत है। पुनः-पुनः वन्दन उस दिव्य देव को जो किसी भी धर्म की किसी भी बोधगम्य विचारधारा से परे है।

ॐ ॐ ॐ

सादर वन्दन उस गुरुओं के गुरु, अनादि अनन्त गुरु, ज्ञानस्वरूप परम देव परमात्मा को! ज्ञान के सागर, अनन्त ज्ञान के सागर, रहस्यात्मक ज्ञान के सागर उस प्रभु से सृष्टि के आदि काल से सब गुरुओं ने ज्ञान प्राप्त किया। उसका प्रकाश प्राप्त कर, वे भूलोक के अग्रणी दूत बन गये। उसकी अहेतुकी कृपा आप सब पर बनी रहे!

ॐ ॐ ॐ

समस्त सृष्टि-कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड के पालन कर्ता, सबकी इच्छाओं की पूर्ति के अन्त्य कर्ता शाश्वत परम भूमा को सादर वन्दन ! अनेकानेक जीवों के अस्तित्व को बहुलता प्रदान करने वाले उस परमात्मा को सादर वन्दन ! कल्याणकारी प्रभु सब प्राणियों और मनुष्यों का महान् पालन कर्ता है।

एक सच्चे भक्त के लिए जो पूर्ण रूप से परमेश्वर को समर्पित है, निष्ठावान् है, आस्थावान् है और किसी प्रकार की गोपनीयता नहीं रखता, वह सर्वज्ञ प्रभु सब-कुछ कर सकता है! ऐसी दिव्य सत्ता को हमारा प्रणाम, वन्दन, आराधन !

> प्रत्येक सूर्योदय तथा सूर्यास्त के साथ काल तीव्र गति के निकला जा रहा है। प्रत्येक क्षण व्यतीत होता जा रहा है। अतः सभी हर्षोल्लास अनुचित हैं। अपने-आपसे पूछें, 'एक वर्ष व्यतीत हो गया, मैंने क्या किया ? दुर्लभ मानव-जन्म को प्राप्त कर मैं क्या कर रहा हूँ?' सागर की दिशा में प्रवाहित होना सरिता का स्वधर्म है, वैसे ही अपने मूल स्रोत से मिलना जीव का स्वधर्म है। स्वगृह को लौटना ही जीवात्मा का परम कर्तव्य है।
>
> -स्वामी चिदानन्द

२. परित्याग का परिणाम

धन्य है भगवान् का वह सेवक जिसका हृदय प्रेम से भरपूर है और साथ ही जो अनासक्त भी है। उसका प्रेम किसी व्यक्ति अथवा वस्तु-विशेष के लिए नहीं, प्रत्युत् सार्वभौमिक है। प्रेम सार्वभौमिक कैसे बना? साधना द्वारा विराग, विवेक और अनासक्ति जैसे गुणों का विकास करने से ही प्रेम सार्वभौमिक बना। उसका प्रेम सबको अपनी ओर आकर्षित करता है; किन्तु वह स्वयं वैराग्य द्वारा अनासक्त होने के कारण उसमें नहीं फँसता।

ॐ ॐ ॐ

धन्य है वह मनुष्य जो दिव्य नाम का अभ्यास करके आध्यात्मिकता की सर्वोच्च परिस्थिति को प्राप्त कर लेता है और अपने चारों ओर बने हुए इन्द्रिय-विषयों के आकर्षक व्यूह का परिच्छेदन कर के संसार में वैराग्य और विवेक की अवस्था में स्थित रहता है। उनके मध्य में रह कर भी वह पूर्ण रूप से इतना अन्तर्मुख और वैराग्य में प्रतिष्ठित रहता है कि उन विषयों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यहाँ होते हुए भी वह यहाँ नहीं है। सभी ऐन्द्रिक विषय वहाँ होते हुए भी नहीं हैं।

ॐ ॐ ॐ

महान् लोग कभी-कभी अन्य साधकों को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए समाज भक्त होने का अभिनय करते हैं। दूसरों को ज्ञान-मार्ग पर लाने के लिए वे उनकी मित्रता और प्रेम पाना चाहते हैं। क्योंकि यदि वे केवल तपस्वी-ज्ञानी बनके रहते हैं, तो भक्त यह सोच कर उनके समीप नहीं आयेंगे -"नहीं, नहीं, यह तो शुष्क ज्ञानी हैं। इसमें माधुर्य नहीं है। ऐसे महात्मा को हम क्या करें?"

इस प्रकार वे उसकी मित्रता से वंचित रह जायेंगे और ज्ञानी उनके भीतर ज्ञान जागृत नहीं कर सकेगा।

अतः ज्ञानी अपने ज्ञान को गुप्त रखते हुए भक्त बन जाता है। उनके साथ रह कर वह उनमें साधना और ज्ञान-प्राप्ति के गुणों के प्रति प्रेम का सृजन करके उन्हें ज्ञान की सर्वोच्च अवस्था में पहुँचाने में सहयोग करता है।

ऐसी महान् आत्माएँ धरा की सफल विभूतियाँ हैं। स्वज्ञान के कारण वे सदा भगवान् के सान्निध्य में रहते हैं। क्योंकि भगवान् वहाँ नहीं है। भगवान् सर्वत्र है, अतः भगवान् इस समय यहीं है, आपके समक्ष है। आपके मुखाभिमुख विराजित है।

ॐ ॐ ॐ

धन्य है वह, क्योंकि वह एक भक्त है, इष्टदेव की आराधना करता है और साथ ही यह ज्ञान भी रखता है कि वास्तव में परमात्मा सर्वशक्तिमान् पूर्ण शक्ति है, नाम-रूप से रहित, अद्वैत, परमोत्कृष्ट, अनिर्वचनीय और अवर्णनीय है। अतः कभी भी यह नहीं सोचना चाहिए कि वह परमात्मा रूप धारण करके इष्टदेव के रूप में निम्न स्तर पर अवतरित होगा अथवा पकड़ में आ जायेगा। नहीं, नहीं, पूजा करते समय भी भक्तिभाववश वह किसी

स्पृश्य अथवा दृश्य भगवान् के प्रति अपने भाव समर्पित करना चाहता है, अन्यथा आभ्यन्तर रूप से वह परमात्मा के ज्ञान में पूर्णतया प्रतिष्ठित है।

उद्बोधन

अपने वास्तविक आनन्द-निकेतन की ओर चलते चलें। संसार के मरुस्थल में आप बहुत भ्रमण कर चुके हैं, अब सन्त-रूपी मरुधानों में विश्राम करें। यह तो तप्त बालुका है, तृप्तिदायक जल नहीं। भ्रम का परित्याग करें। सन्तों से ज्ञान की प्राप्ति करें। सन्त आपका उद्धार करेंगे। वे आपको सहायता प्रदान करेंगे। वे आपका मार्ग-निर्देशन करेंगे और आपके लक्ष्य तक साथ-साथ चलेंगे। अन्धा व्यक्ति बिना किसी नेत्रधारी की सहायता के चल नहीं सकता। संसारी लोग शाश्वत सत्य के प्रति अन्धे हैं और केवल अज्ञानान्धकार में अपना मार्ग टटोल रहे हैं। केवल ऋषि और मुनि गण ही आपको सहायता प्रदान कर सकते हैं। उनकी शिक्षाओं का पालन करें। सदाचार का अभ्यास करें। अपने ध्येय को उच्च बनायें और उचित प्रयत्न करते जायें।

- स्वामी शिवानन्द

३.संन्यास का आह्वान

जीवन क्या है, क्षण-भर के लिए विचार करो। काल की वह अवधि अथवा अंश जिसे हम जन्म के समय से ले कर पावन गंगा, धरती अथवा अग्नि में अर्पित किये जाने पर्यन्त व्यतीत करते हैं, जीवन कहलाता है। आँग्ल भाषा की उक्ति है : "झूले से कब्र तक!" एक अन्य लेखक का कथन है—"गर्भ से कब्र तक!" यही जीवन है। भारत में, हिन्दू समाज में कहेंगे - "जन्म-स्थान से शवदहनशाला तक की यात्रा जीवन की अवधि है।"

किन्तु जीवन का यह एक तुलनात्मक (सापेक्ष) दृष्टिकोण है जिसमें हम केवल इस पृथ्वी ग्रह की सीमित अभिव्यक्ति की बात करते हैं। यहाँ सब-कुछ अभिव्यक्त रूप में है। उसका नाम है, रूप है। वे सीमित हैं। समय की अवधि में परिबद्ध वे सब नश्वर पदार्थ हैं। उनका जन्म, जरा, व्याधि और अन्त में मृत्यु निश्चित है। किन्तु इस परिमित, सीमित, व्यक्त दृश्य जगत् से परे एक और आयाम है जो कालातीत, देशातीत, लोकातीत, अबोधगम्य, अचिन्त्य और अनिर्वचनीय है। इस विस्मयकारी ज्ञानातीत की तुलना में यहाँ का समय तो मात्र एक बूँद है अथवा शून्य है।

तुम्हें पूरी तरह से इसकी पहचान करनी है। शब्द, स्पर्श, रूप, गन्ध आदि तन्मात्राएँ जिन्हें तुम ठोस वास्तविक समझते हो और इन्हें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानने का जो पागलपन करते हो, इससे छुटकारा तभी मिल सकेगा। वे सब मिथ्या हैं। वे असत्य हैं, माया जाल हैं, असत् हैं। ब्रह्मनिष्ठ ऋषियों-मुनियों का ही यह कथन है। वे

अल्पकालिक छाया मात्र हैं, बिना द्रव्य का दृश्य हैं, मृगमरीचिका हैं, छलावा हैं। हम उनके पीछे भागेंगे तो दलदल में फँस जायेंगे, कीचड़ में फँस जायेंगे और प्राणों से हाथ धो बैठेंगे। तो आओ, जीवन की इस छोटी-सी अवधि को स्वप्नवत् संसार की असारता से जागृत करें, विवेक और ज्ञान की प्राप्ति द्वारा इसे ऊपर उठायें और स्वतन्त्र हो जायें, मुक्त हो जायें।

उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत; उठो, जागो, ज्ञान प्राप्त करो। जीवन की परिभाषा जीवन की इस अल्पकालिक अवधि से कहीं अधिक है। पालने से समाधि तक, गर्भ से कब्र तक, एक जन्म-स्थान, एक श्मशान, भौतिक, मर्त्य आवरण को निवृत्ति पाने का स्थान-जीवन तो इससे कहीं अधिक है। वास्तविक जीवन तो आदि और अन्त से अतीत है। वह नित्य, शाश्वत, अनन्त है।

ॐ ॐ ॐ

उस अनन्त जीवन की ओर ही वर्तमान जीवन एक यात्रा है। इसका लाभ उठाओ। जीवन की कला सीखो । इसके नकारात्मक पक्ष होते हुए भी यह महत्त्वपूर्ण है। इसके महत्त्व को हम नहीं जानते। यदि सोचा जाये तो आवागमन के चक्र से मुक्त होने और अमरत्व प्राप्त करने के लिए यह जीवन हमें एक स्वर्णिम वरदान-रूप में मिला है जो इस धरा की सौभाग्यशाली मनुष्य-जाति को ही प्राप्त है, अतः नितान्त महत्त्वपूर्ण है। यही तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिए। हम सब इस लक्ष्य की आकांक्षा करें और धन्य हो जायें!

आप सबसे ऊपर है कल्पवृक्ष राम । समस्त सृष्टि और प्राणियों के भाग्य का संचालन करने वाला वही है। सांसारिक लोगों और साधकों की मूर्खता तो देखो। कल्पवृक्ष के नीचे बैठे वे सदा चिन्तित, दुःखी, उत्सुक और तनावयुक्त रहते हैं मानो आसुरी, दुःखद नकारात्मक शक्ति से उन्हें कुछ अधिक प्राप्त होना हो। अपने दुःखों को वे स्वयं निमन्त्रण दे रहे हैं, स्वयं ही उनका सृजन कर रहे हैं।

अपने अच्छे दिनों में उन्होंने वैराग्य को अनुभव किया; किन्तु अब छोड़ दिया, क्योंकि अन्तिम लक्ष्य के लिए उन्होंने वैराग्य का अभ्यास नहीं किया। जैसे ही उन्हें लगा कि वैराग्य का अर्थ तो सर्वस्व-त्याग है, तो वे समझौता न कर सके और वैराग्य को पीछे छोड़ कर इच्छा में फँस गये-"इच्छा से मैं सन्तोष प्राप्त कर सकता हूँ। इच्छा से ही में प्रसन्न रह सकता हूँ। इच्छा से ही मैं सुखी रह सकता हूँ।" ऐसे अयुक्त और अविवेकशील विचारों से ऐसे लोग घिर जाते हैं और दुःखी होते हैं। कितनी बड़ी मूढ़ता है!

ब्रह्म के साथ एक होने की अद्वैत अवस्था में सतत सुख, शान्ति और आनन्द की वर्षा होती है। उस एकत्व की अवस्था को प्राप्त करके आनन्दित होने की अपेक्षा वे द्वैतभाव की ओर भागते हैं। वे रोते हैं- "आनन्दस्वरूप भगवान् तो पृथक् हैं, मैं तो शोकपूर्ण व्यष्टि आत्मा हूँ।" वे असत् द्वैत का सृजन करते हैं, उसी में डूब जाते हैं और बिना कारण के रोना-धोना करते हैं। इस धरा पर मनुष्य की इस मूर्खता से बड़ी मूर्खता भी क्या हो सकती है? आश्चर्य ! दुःख है!

हे मनुष्य, ऐसी महान् भूल मत करना। रोको इसे। इससे बाहर आओ।

ॐ ॐ ॐ

समर्थ स्वामी रामदास कहते हैं- "हे मानव, इस लोक में भगवान् का वही सेवक सौभाग्यशाली है जो बुद्धिमत्तापूर्वक कार्य करता है। वह यह नहीं सोचता कि शास्त्र क्या कहते हैं, परम्परा क्या है अथवा रीतिरिवाज क्या हैं। यदि ये सब श्रेष्ठ न हों, तो वह कहेगा- 'नहीं, नहीं, मैं तो श्रेष्ठ का चयन करूँगा।' शास्त्रों का कथन है कि

ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम के उपरान्त संन्यास ले कर एकान्तवास करना चाहिए। परन्तु बुद्धिमान् और धन्य वही है, जो इस क्रम की प्रतीक्षा न करके कहता है कि वृद्धावस्था तक क्यों टाला जाये ? समय बीत रहा है। भगवान् जाने, तब मैं कहाँ होऊँगा। तो युवावस्था में शक्ति रहते ही क्यों न संन्यास ले कर एकान्तवास करूँ ? मन निर्मल है, मेरी सब शक्तियाँ मेरे साथ हैं। मुझे भगवत्साक्षात्कार के लिए प्रयास करना चाहिए। वृद्धावस्था में यह प्रयास करने से क्या लाभ, जब शरीर और मन की सब शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं, चिन्ताएँ घेर लेती हैं, शरीर थक चुका होता है और मन विक्षिप्त हो जाता है।"

ॐ ॐ ॐ

आन्तरिक दोष, अपवित्रताएँ और अभाव के प्रति सचेत हो जाने पर मनुष्य अवसाद की अवस्था में आ कर कहता है- "मैं आध्यात्मिक जीवन के योग्य नहीं हूँ। अच्छा यही होगा कि इन्द्रधनुष को पकड़ने की लालसा त्याग कर कोई निम्न पदार्थ की कामना करूँ।" इस प्रकार अपनी अयोग्यता की जागृति के कारण वह अपने आदर्शों से गिर कर मनुष्य-जीवन के इस अमूल्य स्वर्णिम अवसर को खो बैठता है।

स्वामी रामदास कहते हैं-"आसुरी प्रवृत्तियों के कारण तुम्हारा मन दूषित और अपवित्र क्यों न हो जाये, पर तुम आध्यात्मिक जीवन और नाम-जाप को मत त्यागो। अपने दोष, पाप और अयोग्यता के भार से आप स्वयं दब जायेंगे। इन सबका ध्यान रखते हुए दिव्य नाम की शक्तिशाली प्रकृति के प्रति विश्वास और श्रद्धा से लगे रहो; क्योंकि इसी प्रकृति के कारण दिव्य नाम में पावन करने की शक्ति है। वह तुम्हें पवित्र करके आध्यात्मिक जीवन के योग्य बना कर सर्वोच्च अनुभूति भगवत्साक्षात्कार एवं मोक्ष से कृतज्ञ कर सकता है। वह तुम्हारे लिए सब-कुछ करेगा। तुम्हारे सब अवगुणों को दूर करके, सद्‌गुण प्रदान करके, तुम्हें तुम्हारे लक्ष्य के प्रति, भगवान् के प्रति उन्मुख करेगा। अतः चिन्ता मत करो। आध्यात्मिक जीवन अपनाने में संकोच मत करो। डरो मत। शंका मत करो।"

ॐ ॐ ॐ

ईसा मसीह ने कहा था- "मृतकों को अपने मृतक स्वयं दफनाने दो। उठो, मेरा अनुसरण करो।" जब कि रामकृष्ण परमहंस ने अपने एक भक्त से कहा- “समय आ गया है, सर्वस्व त्याग कर अध्यात्म-पथ का अनुसरण करो!" युवा भक्त ने उत्तर दिया- "मैं तैयार हूँ, मैं तैयार हूँ। केवल एक कार्य है, उसे करके जाऊँगा।" रामकृष्ण हँस दिये और बोले- “तुम इसे कभी नहीं कर पाओगे; क्योंकि तुम उस एक कार्य को करने जाओगे, उसे करते हुए दूसरा कार्य समक्ष आ खड़ा होगा और तुम्हें (आत्म) नियन्त्रण की प्रतीक्षा करने का बहाना मिल जायेगा।" मनुष्य के पास भौतिक पदार्थों के संकलन की इच्छा का कोई अन्त नहीं है। अनन्त-एक के बाद एक! कहीं तो तुम्हें निर्णय लेना ही होगा। विमुख हो जाओ, दृढ़ निश्चय करो और आगे पग बढ़ाओ। तभी तुम निरपेक्षता से पवित्रता और भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर आओगे।

इन आदेशों का पालन करने वाले तुम धन्य हो। तुमने ऐसा किया, इसका अर्थ है कि पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज और भगवान् की कृपा आप पर है। इसलिए साहस रखो और दृढ़ संकल्प से लक्ष्य प्राप्ति पर्यन्त आगे बढ़ते रहो। दायें, बायें मत देखो। बाधाएँ आयेंगी; पर पीछे नहीं मुड़ना। बढ़ते चलो, आगे भगवत्प्राप्ति की ओर बढ़ते चलो !

ॐ ॐ ॐ

कितना विशाल कदम बन जाता है, जब उस दिव्यता का आमन्त्रण आता है और अनायास ही भीतर से सर्वस्व त्याग की प्रेरणा होती है। यह कार्य नाव की उस रस्सी को काटने के समान है, जो घाट पर अच्छी तरह बँधी हुई है और उसमें सवार हो कर स्वयं को विशाल सागर में इधर-उधर, बिना पाल-नाव के, बिना पतवार के बहने की आज्ञा दी जाती है। "आओ, उठो, मेरा अनुसरण करो। अपनी सुरक्षा मुझ पर छोड़ दो, मैं तुम्हारा ध्यान रखूँगा।"

यह परमेश्वर की आवाज है, जो कह रहे हैं- "मेरे प्यारे, तुमने मुझे अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है, तुमने मेरे कारण सर्वस्व त्याग करने का संकल्प कर लिया है, तुम क्या सोचते हो तुम्हारे इतने महान् त्याग के प्रति मैं पूर्णतया असावधान रहूँगा? तुम्हारे इस प्रयास में जब मैं इतना आलिप्त हूँ तुम क्या समझते हो मैं समझ नहीं पाऊँगा कि तुमने मेरे लिए क्या-क्या किया है? डरो मत। **सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः** (अन्य सब कार्यों को छोड़ कर मेरी शरण में आ जाओ, मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूँगा, शोक मत करो)। चिन्ता मत करो, शोक मत करो, सब भार मुझे सौंप दो।" यह एक दृढ़ वचन है।

सम्राट् शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास स्वामी हमें सम्बोधित करते हैं- "ओ मेरे प्यारे, मेरे मित्र, अनावश्यक रूप से तुम भयभीत क्यों हो? अज्ञात कल का भय किस लिए? कल मेरा क्या होगा ? मेरा निकट अथवा दूर का भविष्य क्या कहता है? क्या यह अच्छा होगा अथवा नहीं? मेरे लिए कल्याणप्रद होगा अथवा कोई महती विपत्ति मुझ पर आने वाली है?"

इस प्रकार का भय किसी अज्ञानी पुरुष को घेर ले, कोई बड़ी बात नहीं है, स्वाभाविक ही है। किन्तु रामदास कहते है-"यह किसी भी प्रकार से न्यायसंगत नहीं है। न्यायसंगत इसलिए नहीं है कि जब तुमने श्रीराम के चरणों में आत्म-समर्पण कर दिया है और कहा है, 'मैं तुम्हारा हूँ भगवन्', तो सर्वशक्तिमान् स्वामी ने व्रत ले लिया है कि उसकी शरण में आने वाले को कोई भय नहीं रहेगा। वह उसके सब शत्रुओं का विनाश कर देगा। उसके भक्त की ओर उँगली उठाने वाले का भी विनाश हो जायेगा।

"संसार का कोई भी प्राणी इतना छोटा अथवा महत्त्वहीन नहीं है कि परमेश्वर का उस पर ध्यान ही न जाये। उसकी समान दृष्टि में सभी महत्त्वपूर्ण हैं, समान हैं, कोई इतना निम्न नहीं है कि उसकी अवज्ञा हो। तुमने देखा नहीं? रावण का वध करने के पश्चात् जब राम के लिए पुष्पक विमान में बैठ कर लंका से अयोध्या प्रस्थान का समय आता है, तो वे सबको साथ ले कर गये। उन्होंने केवल सीता, लक्ष्मण अथवा कुछ अन्य लोगों के लिए ही विमान नहीं बुलाया। वे तो सभी वानर, भालू आदि को साथ ले कर कर गये। किसी को ऊँचा-नीचा उन्होंने नहीं माना। ऐसा ही परमेश्वर का हृदय है, ऐसी उसकी समान दृष्टि है। अतः उसी के चरणों की शरण ले कर निश्चिन्त हो जाओ। तुमने अच्छा किया है। तुम्हें कोई हानि नहीं हो सकती।"

अतः अज्ञात (अपरिचित) का भय होना स्वाभाविक है; किन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में, जो एक परिचित क्षेत्र है, किसी प्रकार का कोई भय नहीं है। दोनों हाथों में साहस भर कर जब हमने 'अज्ञात' की ओर प्रवेश कर ही लिया है, तो हम सुरक्षित हैं; क्योंकि वह अज्ञात सर्वसुरक्षादायक, दयालु, सर्वशक्तिमान्, कृपालु, सर्वसमर्थ परमात्मा स्वयं ही है। इसकी तुलना में तुम भौतिक पदार्थों और लोगों में अधिक सुरक्षित नहीं रह सकते, यद्यपि आप ऐसा मान बैठे हों, वहाँ तुम सौ गुणा अधिक सुरक्षित हो; क्योंकि वहाँ तुम एक मनुष्य की नहीं, परमेश्वर की सुरक्षा में सुरक्षित हो।

हे भारतवासियो! जागें तथा संसार को धन्य बना दें। भारतवर्ष की सांस्कृतिक परम्परा के भाग्यशाली उत्तराधिकारियो! अपने जीवन को भारत के त्याग तथा सेवा के ज्वलन्त आदर्शों की दीप्तिमान प्रभा बना दें। अपने को हमारे धर्म का सजीव मूर्त रूप बना दें तथा अपने में परम आत्मज्ञान के अनुवर्ती परोपकार के उदात्त सिद्धान्तों का आदर्श प्रस्तुत करें। भारतवर्ष की उदात्त संस्कृति आप तथा आपके समूचे जीवन में प्रतिक्षण और प्रतिदिन सजीव रूप से अभिव्यक्त हो। इस भाँति आपके द्वारा भारत ओजस्वी रूप से सजीव, जाग्रत तथा क्रियाशील बने। आप भारत हैं।

-स्वामी चिदानन्द

४. संन्यास का जीवन

कबीरदास का एक भजन महात्मा गान्धी को बहुत प्रिय था। वह भजन न केवल जगाने वाला और सावधान करने वाला है, प्रत्युत् एक चेतावनी भी है। यह भजन हमारे कर्तव्य का बोध कराके हमें प्रेरित करता है उस परमेश्वर से मिलने के लिए जिसकी उपेक्षा करनी उचित नहीं है।

"ओ मुसाफिर, तुम्हें अपनी मंजिल पर पहुँचना है। गन्तव्य हो तो तुम ऐसे कैसे बैठ सकते हो अथवा नींद ले सकते हो। यदि रात-भर के लिए रुके हो, तो प्रातः जब थोड़ा प्रकाश होने लगे जिसमें तुम अपना हाथ देख सको, तो उस दिन की यात्रा के लिए तैयारी प्रारम्भ कर दो। उठो ! जागो ! भोर हो गयी है, हे मुसाफिर, तुम अभी तक सो रहे हो। अरे मूर्ख, उठ, प्रभु का ध्यान कर। क्षण-क्षण करके जीवन बीता जा रहा है। प्रीति करने का यह कौन-सा नियम है कि प्रभु जाग रहा है और तू सो रहा है?"

यह प्रीति करन की रीति नहीं, प्रभु जागत हैं तू सोवत है।
उठ जाग मुसाफिर भोर भई अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है जो जागत है सो पावत है।।

ॐ ॐ ॐ

समर्थ स्वामी रामदास के अनुसार आध्यात्मिक साधक के जीवन में जो तथ्य सर्वोच्च मूल्य और महत्त्व का है, उसकी ओर वे हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। वे कहते हैं-"सदाचार सर्वोपरि है। सदाचार के समान बहुमूल्य और महत्त्वपूर्ण और कुछ नहीं। तुम्हें सदाचारी बनना चाहिए। अर्थात् तुम्हारा व्यवहार और चरित्र धर्म के स्तर का होना चाहिए। मन से, वचन से, कर्म से तुम्हें धर्म का पालन करना चाहिए।"

इसके महत्त्व का यदि तुम मूल्यांकन न कर सको, तो अपने चारों ओर दृष्टिपात करो और सर्वतः मानव-समाज को देखो। ध्यान दो, सर्वत्र, किस व्यक्ति को किस गुण के कारण दूसरों से सम्मान मिल रहा है। शंका मत करो कि चरित्र सर्वाधिक मूल्यवान् है। सन्देह त्याग कर पूर्ण रूप से चरित्रवान् बनने का संकल्प करो।

ॐ ॐ ॐ

गुरुदेव कहा करते थे- "वे कहते हैं ज्ञान ही शक्ति है, परन्तु मैं निश्चित रूप से घोषणा करता हूँ कि चरित्र शक्ति है।" गुरुदेव यह भी कहते थे कि नैतिक पूर्णता अमृतत्व का आधार है। वे कहते थे- "तुम्हारा जीवन यदि ठोस रूप से धार्मिक जीवन नहीं है, धर्म पर, नीति पर, सदाचार पर आधारित नहीं है, तो तुम अमरत्व और भगवत्साक्षात्कार की कल्पना भी नहीं कर सकते।"

ॐ ॐ ॐ

विश्व-भर के मनुष्यों में किसी-न-किसी प्रकार का अन्योन्य आदान-प्रदान चलता रहता है। यही क्रम तुम्हारी आध्यात्मिक पिपासा, जिज्ञासा और साधना में प्रेरक प्रकृति का हो, तो श्लाघ्य है। इससे आध्यात्मिक आदर्श की ओर संगठित प्रगति होगी, अन्यथा तुम्हारा आचरण मानव-समाज में आध्यात्मिकता के अनुरूप न होने से निषेधात्मक बन कर तुम्हारे संघर्ष में बाधा बन जायेगा। बन्धन और मोक्ष के प्रति संन्यास का जीवन विवेकपूर्ण दृष्टिकोण रखना ही बुद्धिमत्ता है। विवेक, विवेचन, चयन और अस्वीकरण सच्चे साधक के लक्षण हैं।

ॐ ॐ ॐ

इस धरा पर वही मनुष्य धन्य है जो कथन के अनुरूप आचरण करता है, जिसकी वाणी और कर्म में अनुरूपता है। स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज सर्वदा कहते थे- “महान् आत्मा के जो मन में होगा, वही वाणी से बोलेगा और जो मन में है, वाणी से उसका उच्चारण करने पर तदनुरूप कर्म करेगा।"

ॐ ॐ ॐ

घोर विपत्ति में भी मानसिकरूपेण निडरतापूर्वक डटे रहने के लिए उदारहृदय पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने हम पर धैर्य, समन्वय और मानसिक सन्तुलन-रूपी गुणों की वर्षा की। उन्होंने हमें आभ्यन्तर सन्तुलन और विचार तथा भाव की स्थिरता बनाये रखने के लिए प्रेरित किया। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार यह भी एक योग है।

"समत्वं योग उच्यते"-मन का समत्व ही योग है। यह समत्व, अपने व्यक्तिगत दृष्टान्त द्वारा, शिक्षा और उपदेश द्वारा गुरुदेव ने हमें दिया।

कभी-कभी भगवान् जो आपके समीपतम से भी समीप हैं, श्वास से भी समीप हैं, ऐसा आभास कराते हैं कि वे तुमसे बहुत दूर हैं, अन्यथा तुम्हारे मन में यह विचार आ सकता है कि यदि वे इतने समीप थे, तो अमुक घटना कैसे घटित हो सकती थी। भगवान् इसे रोक सकते थे, यदि वे समीप होते। किन्तु समर्थ रामदास मन को सम्बोधित श्लोकों में कहते हैं-"वे कितना भी दूर प्रतीत हों, वे आपके अत्यन्त निकट हैं।”

फिर वे दूर क्यों प्रतीत होते हैं? रामदास कहते हैं-"दया, करुणा के कारण ऐसा आभास होता है। वे हमें और अधिक शक्तिशाली, सहनशील-आध्यात्मिक रूप से सहनशील बनाना चाहते हैं, कितनी भी बड़ी विपत्ति क्यों न आ जाये, हम शान्त भाव से सहन करें और हमारा विश्वास न टूटे। यह तो केवल परीक्षा है आपकी क्षमता की, आपके साहस की, भगवान् के प्रति आपके दृढ़ विश्वास की।"

एक भक्त ने एक बार कहा - "भगवन्, तुम जो कुछ भी कर सकते हो, करो। असाध्य रोगों के साथ मेरे पास आओ। मैं अहर्निश कष्ट में रहूँ। मेरा आवास छीन लो, मेरा परिवार छीन लो, मेरा सर्वस्व ले लो। मेरे सब मित्र मेरे शत्रुओं में बदल दो। धरती का वह टुकड़ा जहाँ मैं जीविकोपार्जन के लिए कठिन परिश्रम करता हूँ, उसे व्यर्थ कर दो। तब भी तुम्हारे दयालु, कृपालु, कल्याणकारी स्वभाव के प्रति मेरी अटूट श्रद्धा बनी रहेगी, मैं विचलित नहीं होऊँगा। तुम्हारे असीम प्रेम, असीम भद्रता, सागर समान करुणा के समक्ष, हे भगवन्, आप कुछ भी करो, मुझे हिलाने में (मेरा विश्वास तोड़ने में) समर्थ नहीं होगा।"

भक्त का यही स्वभाव है। अतः रामदास कहते हैं- “दुःखों से भरे इस मर्त्यलोक में जहाँ दुःख और मृत्यु अनिवार्य हैं, इन घटनाओं से मन को विचलित न करो। ऐसा नहीं है कि भगवान् तुम्हारे से दूर हो गये हैं। एक छोटे-से परीक्षण द्वारा तुम्हारा विश्वास और अधिक बढ़ाने के लिए वे ऐसा करते हैं। भक्ति की महत्ता कदापि नष्ट नहीं हो सकती। विपत्ति का पहाड़ भी आप पर क्यों न टूट पड़े, भक्ति की शक्ति की अन्ततः विजय होगी। भक्ति में तो ऐसा बल है कि यह सब विपत्तियों का निराकरण करके आपको शान्ति और आनन्द से कृतार्थ करेगी।" इस संसार में वे नर-नारी धन्य हैं जो अपनी सरल, स्पष्ट और सहज प्रकृति से दूसरों का मन हर लेते हैं। वे सदा सत्य बोलते हैं, झूठ नहीं बोलते। दूसरों के साथ व्यवहार में अत्यन्त चतुर, धोखा और छलकपट की नीति नहीं अपनाते । बहुत लोग स्वयं को चतुर समझते हैं; क्योंकि वे किसी को भी चकमा दे सकते हैं। यह सांसारिक चतुराई और

कपटपूर्ण होशियारी आध्यात्मिक गुण नहीं है। इससे तुम्हें संसार में आगे बढ़ने का अवसर तो मिलता है; परन्तु परमात्मा उस सरल, निष्कपट-हृदय व्यक्ति से प्रेम करते हैं जो सौभाग्यवश इस प्रकार लोमड़ी-जैसी चालाकी से, होशियारी से, धोखाधड़ी और घुमावदार कूटनीति से मुक्त है।

ॐ ॐ ॐ

निवृत्तिनाथ का कथन है-"अपना हृदय उच्चता-मनोग्रन्थि (Superiority Complex) से दूषित मत करो। ऐसा मत सोचो कि तुम श्रेष्ठ हो; क्योंकि तुम ब्राह्मण हो, क्योंकि तुम शिक्षित हो, सुन्दर हो अथवा अच्छे गायक हो अथवा तुम कोई राष्ट्रपति अथवा मुख्यमन्त्री हो-ऐसी कोई भावना हो, यह तो उपाधि मात्र है जो मनुष्य का पतन करने का प्रयास करती है।

"तुम उस परमात्मा के पुत्र हो, दिव्य हो; क्योंकि परमात्मा के अंश होने के कारण तुम्हारी प्रगति भी वही है जो उस परम पुरुष की है। सागर की लहर सागर के जल से पृथक् तो नहीं होती। सूर्य की किरण प्रकाश नहीं तो और क्या है! चीनी का एक कण और एक ढेर-दोनों शत-प्रतिशत मीठे हैं। पूर्ण हो अथवा अंश-गुण समान होते हैं। अतः तुम भी दिव्य प्रकृति हो।

"भगवान् सबको समान दृष्टि से देखता है। वह महान् से महानतम और नम्र से नम्रतम है। कृष्णावतार में भगवान् ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आने वाले अतिथियों के चरण प्रक्षालन किये। महाभारत के युद्ध में अपने ही शिष्य अर्जुन के सारथी बने। अर्जुन ने उच्च स्थान ग्रहण किया और कृष्ण ने निम्न स्थान लिया। गाड़ीवान का कर्तव्य निभा कर भी उन्होंने यह कभी नहीं सोचा कि यह कार्य निम्न स्तर का था।

"अतः किसी भी परिस्थिति में अपना महत्त्व बताने या बढ़ाने का भाव मत रखो। सभी समान हैं। वही प्राण-शक्ति सब जीवों में विद्यमान है। सब रह रहे हैं, गतिशील हैं, देखते हैं, कार्य करते हैं; क्योंकि सबके भीतर एक वही तत्त्व विराजित है, वह चाहे पौधा हो, पशु हो, पक्षी हो, मछली हो, कुछ भी हो, सबमें वही प्रकाशमान है। इस दृष्टि से सब समान हैं। उस प्राण-शक्ति के अभाव में तुम केवल एक शव हो, काठ के लट्टे की भाँति । उसे रखा नहीं जाता। अतः सब प्राणियों में उसी एक प्राण-तत्त्व की विद्यमानता के कारण आन्तरिक तादात्म्यता को जानते हुए अहंकार मत करो। तभी तुम भगवान् का भजन करने योग्य बनोगे। उसकी स्तुति करोगे।"

ॐ ॐ ॐ

जिस प्रक्रिया में तुम भगवान् को भूलोगे, वह तुम्हारे दोनों पैरों में लोहे की श्रृंखला बन जायेगी। सावधान ! बुद्धिमान् पुरुष सतर्क रहेगा और सावधानी से अपने कर्मों की गुणवत्ता का निरीक्षण करेगा और यदि इसमें भगवान् नहीं हैं तो दूर-दूर, ऐसे कर्म से दूर रहेगा।

तुम यहाँ एक दिव्य नियति का साक्षात्कार करने आये हो। बुद्धिमान् बनो। सतर्कता से अपने कर्म का निरूपण करो और येन-केन-प्रकारेण संसार-रूपी भवसागर से पार हो जाओ।

ॐ ॐ ॐ

आध्यात्मिक जीवन यापन करने वाले आध्यात्मिक साधक का स्वधर्म क्या है? सब प्रकार की अधार्मिकता को दूर रख कर निश्चित दिशा में यदि वह पग बढ़ाये, तो आत्म-साक्षात्कार की ओर बढ़ सकता है। सभी ऐन्द्रिक सुख और कामना-पूर्ति से सम्बन्धित सर्व कर्म आपको भौतिक जगत् की ओर आकृष्ट करेंगे, सीधे रास्ते से दूर करेंगे और अधर्म पर ही चलने की प्रेरणा देंगे। अतः ऐसे मनोरंजक कर्मों से दूर रहें।

इसका अभिप्राय यह कदापि नहीं कि तुम स्वादिष्ट भोजन न करो; क्योंकि यह तो ऐसा मनोरंजन है जो अनिवार्य स्वाभाविक क्रिया से सम्बद्ध है। किन्तु एक सच्चे साधक से थोड़ी-सी तपस्या की अपेक्षा की जाती है। उसे अनासक्त होना आवश्यक है। उसे अपनी इच्छाओं और इन्द्रिय-सुखों पर लगाम लगा कर संयत जीवन व्यतीत करना है। मन और इन्द्रियों को अनुशासित करके ईश्वरोन्मुख करना है। संसार में रहते हुए एक अच्छे साधक को स्वयं में कुछ अंश तक यतिधर्म निभाना पड़ेगा। यतिधर्म का सार है-आत्म-संयम, मनोनिग्रह, वह नहीं करना जो मन करना चाहता है, प्रत्युत् इससे वह काम कराना जो तुम चाहते हो।

ॐ ॐ ॐ

बहुत से लोग यह सोचते हैं कि आध्यात्मिक जीवन का अर्थ है-शरीर को कष्ट देना, अनेक प्रकार के व्रत ले लेना, तपश्चर्या करना, अति-संयम करना, आत्म-सन्ताप और शरीर को दण्ड देना। रामदास कहते हैं-"यह सब व्यर्थ है। आत्म-सन्ताप, तपस्या, व्रत आदि से शरीर को अनावश्यक रूप से क्यों कष्ट देते हो। यह उपाय परमात्मा को प्रिय नहीं है। तुम्हें तो केवल इतना करना है कि उस प्रभु की शरण में आओ, उसे प्रसन्न करो अपनी भक्ति और निरन्तर जप-साधना से, तब बड़ी-से-बड़ी विपदा भी सहज ही टल जायेगी। सुख सभी चाहते हैं, दुःख कोई नहीं चाहता। मैं तुम्हें उत्कृष्ट, रामबाण उपाय बता रहा हूँ। दिव्य राम-नाम के जप से सब दुःख समूल नष्ट हो जायेंगे।"

ॐ ॐ ॐ

धन्य है वह पुरुष जो भौतिक सुखों से विरक्त है। कामनाओं के विषय उसे कितना ही घेरे रहें, वह जानता है कि वे सब व्यर्थ हैं, अनित्य हैं, क्षणभंगुर हैं। वह जानता है कि वे आकर्षक प्रतीत होते हैं और सुख-सुविधा का आभास कराते हैं; किन्तु प्राप्त कर लेने के पश्चात् वह सुखद कल्पना अदृश्य हो जाती है। जो हम समझते हैं, वे विषय हमारी उस आशा से कहीं अधिक पृथक् प्रकृति के होते हैं। ऐसा जान कर वह साधक आकर्षक सांसारिक विषयों के मध्य विचरण करते हुए भी उनसे दूर रहता है।

ॐ ॐ ॐ

विषयोन्मुखता को समूल नष्ट किये बिना युगों पर्यन्त भी तुम मोक्ष-प्राप्ति का स्वप्न नहीं देख सकते। सहस्रों जन्म ले लो, करोड़ों वर्ष व्यतीत हो जायें, चारों युग पुनः-पुनः आयें-जायें; किन्तु स्वप्न नहीं देखना। वृत्तियों को संयत किये बिना तुम मुक्त नहीं हो सकते।

भगवन्नाम-जप और भगवद्भक्ति से ही मोक्ष सम्भव है। और जिस हृदय में वासनाओं का वास हो, उस हृदय में भगवान् अथवा उसके दिव्य नाम का उदय कदापि नहीं हो सकता। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं। यदि तुम राम को चाहते हो, तो काम को छोड़ दो। राम और काम साथ-साथ नहीं रह सकते। काम में आसक्ति रखोगे, तो राम के लिए हृदय में स्थान नहीं रहेगा।

ॐ ॐ ॐ

मन इच्छा स्वरूप है। इच्छा के बिना मन का अस्तित्व नहीं है, किन्तु इसी मन में दो रास्ते हैं। एक रास्ता तो उत्कृष्ट, अच्छा, पवित्र, आनन्दप्रद और कल्याणप्रद है। दूसरा रास्ता अमंगलप्रद, अपवित्र, बुरा और पतन की ओर ले जाने वाला है। बुद्धिमान् व्यक्ति मन के प्रति समीक्षा की दृष्टि रखता है और अन्तःकरण की स्थिति जानने

का प्रयास करता है। कौन-सा रास्ता कामनाओं की ओर आगे बढ़ रहा है? उसे प्रतीति हो कि दिशा उचित है, तो वह मन को उत्साहित करता है और यदि उसे यह आभास हो जाये कि भूलवश इच्छाओं ने उसका रास्ता परिवर्तित कर दिया है जो कल्याणकारी और लाभप्रद नहीं है, तो वह तत्काल अपनी वृत्तियों को अन्तर्मुखी करके उन्हें शुभ और भद्र की ओर ले जाता है।

ॐ ॐ ॐ

ऐसे अनुशासन का पालन करते हुए कहीं अहंभाव न बढ़ा लेना-"मैं ऐसा कार्य कर रहा हूँ जो अधिकांश लोग नहीं कर सकते। अतः मैं एक असाधारण व्यक्ति बन गया हूँ।" सदा नम्र रहो। नम्रता का अभ्यास करो। कर्म में नम्र, वाणी से नम्र, व्यवहार में नम्र, इसी में तुम्हारा कल्याण है।

ॐ ॐ ॐ

अहंकार से भरे महान् योगी चांगदेव का जब अभिमान टूटा, तो वे दण्डवत् मुद्रा में भूमि पर गिर पड़े और उच्च स्वर से चार सन्तों-निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर, सोपानदेव और मुक्ताबाई से बोले-"मैं सोच रहा था कि मैं कुछ हूँ; परन्तु स्वीकार करता हूँ, मैं कुछ भी नहीं हूँ।" भ्राताश्री निवृत्तिनाथ आगे बढ़ कर उन्हें भूमि से उठा कर कहते हैं-"उठो, उठो, ऐसा मत कहो कि तुम कुछ नहीं हो। तुम तो महान् योगी हो। इसमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु अपने योग से बढ़ कर अपनी अलौकिक शक्तियों से बढ़ कर, सर्वोपरि है तुम्हारा अहंभाव । तुम इस धरा की परिधि में ही सीमित रह गये। तुम उस परम सत्ता तक नहीं पहुँच पाये जो पूर्णरूपेण क्षुद्र अभिमान के अभाव में ही प्राप्त है।" गुरुदेव गाते थे-"अपना अस्तित्व खो कर ही मैं मोक्ष प्राप्त करूँगा। जीने के लिए मरना पड़ेगा। दिव्य जीवन व्यतीत करो।"

ॐ ॐ ॐ

घनिष्ठ मित्र भी यदि भगवान् का भक्त नहीं है, तो उस मित्र से दूर रहो। ऐसे मित्र हमारा जीवन व्यर्थ करते हैं। वे कहेंगे-"चलो, पार्टी में चलें। चलो, सिनेमा देखने चलें। चलो, पर्वतों की पद-यात्रा पर चलें।" सब-कुछ, बहुत अच्छा! किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से अमूल्य जीवन का इतना ह्रास! इस प्रकार यदि अमूल्य समय व्यर्थ गँवा दिया, तो क्या ऐसे व्यक्ति को तुम अपना मित्र अथवा शुभ चिन्तक कहोगे, जिसके कारण तुम्हारा इतना समय व्यर्थ गया?

रामदास कहते हैं-"ऐसी मित्रता से क्या लाभ, जो भगवान् राम की स्मृति न कराये ? मन में आपने भगवान् को धारण कर लिया है, तो ऐसे व्यक्ति से क्या लाभ जो तुम्हारी उस धारणा को तोड़ कर तुम्हारे मन की स्थिरता और सन्तोष को छीन ले?

"ऐसे व्यक्ति से क्या लाभ जिसकी मित्रता में तुम्हारी अहंभावना अभिव्यक्त होती है?" हम सब अपनी साधना के द्वारा इस 'अह' को मारने का यथासम्भव प्रयास कर रहे हैं। जीवन के लिए मृत्यु का वरण करो। जीवन को दिव्य बनाओ। स्वार्थवश कोई मित्र यदि तुम्हारी प्रशंसा अथवा चाटुकारिता करे, तो उसकी मित्रता विषवत् त्याग दो।

ॐ ॐ ॐ

मृत व्यक्ति के लिए शोक करना, बीती बात का शोक मनाना, प्रिय पदार्थ के खो जाने पर शोक करना व्यर्थ है; क्योंकि यह सब तो अनिवार्य है। जिसका कोई निराकरण ही न हो, उसका शोक क्या मनाना ? उसे निश्चित रूप से होना ही था और होनी टाली नहीं जा सकती। अश्रुधाराओं के सागर में ही डुबकी क्यों न लगा लो, भावी को तुम रोक नहीं सकते।

मनुष्य इस सत्य को स्वीकार क्यों नहीं करता। जब जैसा होना है वह तो होना ही है, ऐसा सोच कर वह शान्त और मौन क्यों नहीं हो जाता-"हाँ, यह तो होना ही है। इसके लिए मैं कुछ नहीं कर सकता।" बुद्धिमान्, विवेकशील बनना सीखो, शान्त रहना सीखो, परिस्थिति का सामना करना सीखो।

ॐ ॐ ॐ

किसी प्रकार की चिन्ता करना समय व्यर्थ गँवाना है, क्योंकि आप कितनी भी चिन्ता क्यों न कर लें, कर्मों के नियमानुसार लिखित प्रारब्ध तो आप मिटा नहीं सकते। चिन्ता करने की अपेक्षा अपना मन और हृदय सीधा परमात्मा में लगा दो।

वह परमात्मा ही स्तुति और ध्यान करने योग्य एकमात्र विषय है। सृष्टि में रचित कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जो नमन करने योग्य हो। कुछ सोचना ही चाहते हो तो परमेश्वर के विषय में सोचो, विषयों के बारे में नहीं। प्यार करना चाहते हो तो परमेश्वर से प्यार करो, विषयों से नहीं। उसी में पूर्णता, शान्ति और सुख निहित है। बुद्धिमान् ऐसा ही करते हैं। इसी में निहित हैं तुम्हारे आत्यन्तिक सुख का आश्वासन और प्रत्याभूति (गारंटी) - कामनाओं का विराम-क्योंकि उस परमेश्वर में सर्वस्व पूर्ण हो जाता है, वह पूर्ण स्वरूप है। बुद्धिमान् बनो, जो करना है अभी करो। अभी समय है। उसका चिन्तन करो, उसका गुणगान करो, उसकी महिमा गाओ, उसकी स्तुति करो।

ॐ ॐ ॐ

आत्मिक रूप से एक सच्चे साधक को अन्तर्निरीक्षण, आत्म-विश्लेषण और विवेक द्वारा सांसारिकता से पूर्णरूपेण मुक्त होने में सफलता प्राप्त कर लेनी चाहिए। राग-द्वेष, ईर्ष्या, अभिमान और स्वार्थ भाव आदि दोष उसकी प्रकृति में नहीं होने चाहिए। आलस्य, अकर्मण्यता, चंचलता और संसार के प्रति राग और अधिक हँसना आदि दुर्गुणों से बचना चाहिए। वाणी का संयम रखना चाहिए। वाचाल - हर समय बोलना, बोलना-ऐसा नहीं होना चाहिए।

इस बात के लिए चैतन्य रहना चाहिए कि वाणी में भूल से भी अहंभाव की चेतना न लौट पाये। जब तक आप पूर्ण रूप से सावधान नहीं रहेंगे, वाणी आपको पथभ्रष्ट कर सकती है। अतः साधक सदा नम्रता, सरलता और माधुर्य-भरी वाणी द्वारा ही प्रचार-प्रसार करता है।

ॐ ॐ ॐ

हे मेरे मन, बहुत हो चुका। इधर-उधर की बात करने में पहले ही तुम्हारा आधा जीवन व्यतीत हो चुका है। शान्त ! अब संकल्प करो कि आज के बाद, भगवान् राम, परमेश्वर-सर्वोच्च सत्य, अनन्य वास्तविकता के अतिरिक्त कुछ और नहीं बोलोगे। जब भी बोलोगे, परम सत्य परमेश्वर के गुण गाओगे, अन्यथा मौन रहोगे। राम

के अतिरिक्त कुछ और बोलने से तो अच्छा है तुम एक शब्द भी उच्चारण न करो, मौन रहो। समय आ गया है। संकल्प कर लो। भगवान् के अतिरिक्त कुछ और नहीं बोलोगे।

ॐ ॐ ॐ

रामदास कहते हैं-"प्यारे मित्र, भगवान् की ओर से तुम्हें जो-जो कर्तव्य करने को मिला है अथवा जो भूमिका निभाने को मिली है, उसे निष्काम भाव से पूर्ण करो। प्रश्न मत करो। यह तुम्हारे कल्याण के लिए है। इस संसार में, इस समाज में, इस क्षेत्र में तुम्हें कुछ विशेष कर्तव्य करने हैं, तो जान लो कि यह सब प्रभु की ही इच्छा है। अत: इसे अपनी साधना और योग का अंग समझ कर करो। इसमें से अपने लिए कुछ मत माँगो। भगवान् द्वारा निर्दिष्ट कर्तव्य का पालन करते चलो। ऐसा करने के साथ ही सबके साथ तादात्म्य भाव रखो। भेद-दृष्टि मत रखो। वे मुझसे पृथक् हैं और मैं पृथक् हूँ ऐसा भाव मत रखो, अन्यथा साधना में पीछे रह जाओगे। सब ओर परमेश्वर ही हैं। वे सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापक हैं। अतः तुम दूसरों से पृथक् नहीं हो। वे तुमसे पृथक् नहीं हैं। सब प्राणियों में आत्मैक्य का भाव रखो (**आत्मवत् सर्वभूतेषु**) । इसी में तुम्हारी साधना का रहस्य निहित है।"

एवंविध, परमात्मा द्वारा निर्धारित योजना के अनुरूप कर्तव्य पालन करते हुए, संसार में सबमें आत्मभाव रखते हुए उसी का गुण गाओ, उसी परमात्मा की स्तुति करो, उपासना करो, उसे ही महिमान्वित करो। यही सुपथ है।

ॐ ॐ ॐ

धन्य है वह सेवक परमात्मा का, जो उसका कार्य करते-करते स्वयं को थका देता है। वह जो भी चिन्तन करता है, वह उसी परमात्मा का प्रयोजन है जिसे पूर्ण करने के लिए उसे धरती पर उस (प्रभु) ने भेजा है। उस प्रयोजन की पूर्ति के लिए वह जीवन यापन करता है।

ॐ ॐ ॐ

दूसरों की सेवा के लिए, परोपकार के लिए, दूसरों को लाभ पहुँचाने का प्रयास करने में और दूसरों की सहायता करने के प्रयास में स्वयं को थकाना हितकर है। किन्तु इस पर अभिमान नहीं करना चाहिए। इतना त्याग : शरणागति और आस्था का एक जीवन उत्कृष्ट, अमोघ, श्रेष्ठ जीवन यापन करते हुए भी तुम्हें नम्रता का भाव रखते हुए झुक कर रहना चाहिए। दूसरों के प्रति सेवक का भाव बनाये रखो मैं तुम्हारे से तुच्छ हूँ।

मन्दिर में प्रयोग होने वाला चन्दन की लकड़ी का एक टुकड़ा नित्य पत्थर से रगड़े जाने पर भी सर्वत्र सुगन्धि फैलाता है। चन्दन का वह टुकड़ा दूसरों को प्रसन्नता देने के लिए छोटे-से-छोटा होता जाता है और एक दिन अदृश्य भी हो जाता है। कपूर भी भगवान् को महिमान्वित करने के लिए पूर्ण रूप से समाप्त होने अथवा जल जाने पर्यन्त जलता रहता है। अपने अस्तित्व की परिसमाप्ति की उसे कदापि चिन्ता नहीं; क्योंकि उसने एक उदात्त कार्य किया है। परम देव की पूजा में उसने सहयोग दिया है।

ॐ ॐ ॐ

रामदास कहते हैं-"हे मेरे मन, अब आओ, अधिक देर न करो, प्रत्येक सम्भव प्रयास से श्रीराम को अपना, सर्वथा अपना बना लो। अनुभव करो कि इस संसार में प्रभु राम के सिवा तुम्हारा अपना कोई नहीं है।

केवल वही तुम्हारा अपना है और तुम सर्वथा उसी के हो। 'हे भगवन्, मैं तुम्हारा हूँ, तुम मेरे हो, मेरा और कुछ नहीं है। केवल तुम्हीं हो जिसे मैं अपना कह सकता हूँ' ऐसा करोगे तो तुम्हारा अनन्य कल्याण होगा। सब सुख-शान्ति तुम्हारी होगी। तुम्हारा जीवन सफल होगा। 'तीनों लोक जानते हैं कि जो व्यक्ति मेरे पास यह कहते हुए आता है कि 'मैं तुम्हारा हूँ', मैं उन्हें पूर्ण सुरक्षा प्रदान करता हूँ। उन्हें कोई अभाव नहीं रहेगा।' उसने यह व्रत ले लिया है। अतः वह वचन ही तुम्हारी गारण्टी है, आशा है, तुम्हारे कल्याण का सम्पूर्ण आश्वासन और पूर्ण सुरक्षा है।"

ॐ ॐ ॐ

"हे मन, भगवान् राम के चरणों में सदा लगे रहना। वेद, शास्त्र और पुराणों ने इन चरण-कमलों की महिमा गायी है, जिन चरणों में रह कर प्राणी तत्काल सदा-सदा के लिए आत्म-सन्तुष्टि प्राप्त कर लेता है और समग्र चंचलता दूर हो जाती है। स्थिर सुख-शान्ति और आनन्द-प्राप्ति का अन्य कोई स्रोत नहीं है।

"अध्यवसाय (दृढ़प्रतिज्ञा) और विवेक से लगे रहो। इस दृढ़विश्वास के समक्ष कोई मिथ्या भाव आये, तो उसे बदल डालो। कौन-सा भाव बाधा बन कर समक्ष आता है ? भाव तो यही है कि शरीर को सब प्रकार की सुख-सुविधा प्रदान करती हैं- मेरे पास सुख के सभी साधन हैं, उन्हें प्राप्त करूँ, भोग करूँ, तभी सुख सम्भव है।' यह मिथ्या भाव अथवा अज्ञान निरन्तर इसी चिन्तन का परिणाम है कि 'मैं यह शरीर हूँ, यह मेरे उपभोग का साधन है। यदि इस शरीर के द्वारा मैं सुख नहीं प्राप्त करता, तो वस्तुतः जीवन का आनन्द मैं प्राप्त ही नहीं कर सकता।' अरे मन, यह भाव त्याग दो कि तुम यह शरीर हो। भगवान् राम के चरण-कमल में सदा आनन्द प्राप्त करो।

"अरे मन, मैं तुम्हें बता रहा हूँ कि इतस्ततः भटकने से, मारा-मारा फिरने से तुम्हारे हाथ कुछ नहीं लगेगा। इतना अवश्य है स्वयं को परिश्रान्त करने में सफल हो जाओगे; किन्तु जिस सुख की खोज में इधर-उधर भटक रहे हो, वह तुम्हें नहीं मिलेगा। तुम विपरीत दिशा में जा रहे हो। श्रीराम के चरणारविन्द में वास करने में ही सुख है। केवल वही आनन्द-स्रोत है।"

ॐ ॐ ॐ

दृश्य जगत् में अनेकता के भ्रम में न पड़ने वाला व्यक्ति धन्य है। उसके अनुसार संसार में कोटि-कोटि पृथक् पृथक् पदार्थों के होते हुए भी उनमें एकत्व निहित है। समस्त दृश्य जगत् में केवल एक ही सार्वभौमिक सत्ता अन्तर्निहित है। विविध प्रतीति में भी एकमात्र परमात्मा के दर्शन उसका लक्ष्य है।

ॐ ॐ ॐ

सच्चे साधक का समय शाश्वत सत्य अकाल पुरुष परमात्मा के चिन्तन में व्यतीत होता है। यही उसका व्यवसाय है। व्यर्थ के तर्क और वाद-विवाद में समय नष्ट करने की अपेक्षा वह सत्य को ही परावर्तित करने में संलग्न रहता है। दूसरों के हित के लिए अपने अनुभव उन्हें बताता है। 'अन्य लोग भी मेरी भाँति लाभ उठा सकें', यह उसकी प्रवृत्ति रहती है, स्वभाव बन जाता है।

ॐ ॐ ॐ

रामदास कहते हैं-"किशोरावस्था में मैंने गृह-त्याग कर दिया। जीवन-भर आध्यात्मिक मूल्यों पर अडिग रहा। अतः आध्यात्मिक जीवन के प्रति कुछ आदेश करने का मुझे अधिकार है। अतः, आओ, बताता हूँ। कर्म, दान-पुण्य, तीर्थ-यात्रा, शुभ कर्म, धर्म, भोग-त्याग यह सब-कुछ नहीं। कहना न होगा-यह तो बहुत छोटी बातें हैं। दिव्य नाम के गुणगान में सुदृढ़ श्रद्धा ही सर्वस्व है। दिव्य नाम संकीर्तन का यदि कठोरता से अभ्यास करो, तो केवल वहीं तुम्हें जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति कराने में सक्षम है, पर्याप्त है।"

ॐ ॐ ॐ

निष्काम भाव से सतत राम-नाम का जप करते रहो। किसी कामना से करोगे, तो केवल वही पूर्ण होगी। बिना किसी कामना के करोगे, तो सब-कुछ प्राप्त कर लोगे। पूरा अक्षय पात्र तुम्हें प्राप्त होगा। तुम पर सर्व कमनीय पदार्थ और चिर सुख की वर्षा होगी। सतत निष्काम भाव से राम-नाम के जप के परिणामस्वरूप तुम्हारा जीवन कष्टप्रद कठिनाइयों, दुःखों और समस्याओं से मुक्त हो जायेगा। सहज रूप से सब कार्य होते जायेंगे। समस्याएँ स्वयं ही सुलझती जायेंगी। कठिनाइयाँ, सामना करने की परिस्थिति आने से पूर्व ही दूर हो जायेंगी।

ॐ ॐ ॐ

उस राम-नाम का चिन्तन सदा करते रहो जिसका नाम महानतम दोष का भी निराकरण कर देता है। कितना ही बड़ा दोष तुम्हारे भीतर क्यों न हो, व्याकुल नहीं होना। यह दोष तुम्हारे मन पर बोझ हो सकता है। सम्भव है तुम इसके साथ (इसे दूर करने के लिए) संघर्ष कर रहे हो; पर परिणाम कुछ नहीं मिलता। घबराओ मत! उसका चिन्तन करोगे, तो अपराजेय दोष पर तुम सहज रूप से विजय पा लोगे। उदीयमान सूर्य के समक्ष धुन्ध की भाँति इसका लोप हो जायेगा।

उस राम का स्मरण करो जिससे परम पद की प्राप्ति होती है। दिव्य राम-नाम संकीर्तन द्वारा मोक्ष पाना और आनन्दमयी स्थिति प्राप्त करने जैसा जब सुलभ उपाय है, तो कठिन दार्शनिक पुस्तकों के वाद-विवाद में क्यों पड़ते हो? ग्रन्थों में आपको क्या मिलता है? पेपर! उत्कृष्टतर जीवन का सार, आध्यात्मिक जीवन का सार पुस्तकों में नहीं है, प्रत्युत् तुम क्या हो, क्या कर रहे हो और कैसा जीवन व्यतीत कर रहे हो, इसमें निहित है।

ॐ ॐ ॐ

भगवान् के नाम में श्रद्धा न रखने वाला व्यक्ति शोचनीय है, दुष्ट है। इस भौतिक जगत् के निरपेक्ष जीवन के प्रति ही सदा वह उत्सुक और चिन्तित रहता है। यह सब परिहार्य है; किन्तु यह अभागा व्यक्ति नहीं जानता कि भगवन्नाम सब प्रकार की सुरक्षा देने वाला है। अनावश्यक रूप से वह स्वयं को अनेक यन्त्रणाओं में फँसा लेता है; क्योंकि उसे भगवान् के दिव्य नाम में विश्वास ही नहीं है। मुक्तिदाता जब तुम्हारे ही पक्ष में है, तो व्यर्थ में इधर-उधर अपना सर क्यों पटकते हो?

ॐ ॐ ॐ

वास्तव में विश्राम तो वही पा सकता है जिसकी वागेन्द्रिय (जिह्वा) सदा राम-नाम रटती रहती है। ऐसा व्यक्ति सदा विश्राम, सुख और आनन्द की अवस्था का अनुभव करता है- "यह मेरा विश्राम-स्थल है। जिसे प्राप्त करने की मेरी तीव्र आकांक्षा थी, उसे मैंने प्राप्त कर लिया है। अन्य स्थान तो शोरगुल वाले, थकाने वाले हैं जहाँ विश्रान्ति नहीं है। विश्राम तो यहीं है।" एक बार इस बात का ज्ञान हो जाने पर वह राम-नाम संकीर्तन का सहारा लेता है जहाँ वह सदा निश्चिन्त, शान्त, सुखी, उल्लसित और आनन्दमयी स्थिति में रहता है।

वह अद्वय सत्ता, जिसकी मानव-समूह अल्लाह, खुदा, आहुर्मज्दा, ताओ के रूप में, परात्पर के रूप में पूजा करता है, जिस सत्ता को नास्तिक लोग अस्वीकार करते हैं, एक महासागर है जिसमें सभी धार्मिक धाराएँ प्रवाहित होती हैं। उसकी ही महिमा इंजील, कुरान, ग्रन्थसाहब और वेदों में गायी गयी है। प्रार्थना-भवनों, गिरजाघरों, मसजिदों तथा मन्दिरों में उसकी ही पूजा होती है। किन्तु, उसका सबसे विशाल मन्दिर तो मानव का हृदय है। वह सबमें व्याप्त, प्रविष्ट तथा अन्तर्व्याप्त है। वही हमारी सत्ता का मूल तत्त्व है।

- स्वामी चिदानन्द

५.संन्यास का वास्तविक स्वरूप

आध्यात्मिक जीवन में जब प्रारम्भिक उत्साह और प्रत्याशा क्षीण होने लगती है और ऐसा प्रतीत होता है मानो साधक मध्य-राह में आ कर कहीं अटक गये हैं, न इधर के न उधर के, कोई प्रगति नहीं कर रहे, तो मैं सदा उन्हें परामर्श देता कि वे पृथक् कोण से पुनः इस पर दृष्टिपात करें; क्योंकि जो दृष्टिकोण उन साधकों ने अपनाया, वह सही नहीं था। मैंने कहा- "आत्म-साक्षात्कार हेतु हम यहाँ आये हैं, अतः यह एक अनन्य लक्ष्य है जो तुम्हें प्राप्त करना है। अत: इसी दिशा में आगे बढ़ते हुए, ऊपर उठते हुए गन्तव्य को पाना है।

"सांसारिक व्यक्तियों को आकर्षित करने हेतु आरम्भ में यह संकेत दिया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि हमें जीवन मिला है भगवान् की भक्ति के लिए, उसके स्मरण के लिए, उसकी आराधना के लिए, उसे महिमान्वित करने के लिए और सबको यह घोषणा करने के लिए कि सब महानता तो केवल उस सर्वशक्तिमान् प्रभ की है, महिमा उसी की है। जीवन का और कोई अभिप्राय नहीं है। प्रभु का गुणगान करते हुए, सतत उसका चिन्तन करते हुए, नाम-स्मरण करते हुए, प्रार्थना करते हुए, उसकी दिव्यता और सम्पूर्णता के साक्षी बन कर तुम अपना जीवन यापन करते हो, यही अपने-आपमें एक जीवन की पूर्णता है। परमात्मा के यश की सुगन्ध सब ओर प्रसारित करके तुम अपना जीवन सार्थक कर रहे हो। उस अलौकिक सत्ता का गुणगान करते-करते सतत उसी में लीन होना ही जीवन का अर्थ है।

"अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यदि तुम भगवान् के लिए जी रहे हो और निरन्तर उसकी महिमा, महानता, सर्वशक्तिमत्ता के साक्षी हो और जीवन-भर यही करते हो, तो तुम्हारा जीवन व्यर्थ नहीं गया। तुमने एक योग्य, उत्कृष्ट जीवन जिया है। अभिनन्दन तुम्हारा ! यह एक सत्य है। परमात्मा का तुम्हें यहाँ भेजने का प्रयोजन तुमने पूर्ण किया अर्थात् जीवन-भर तुमने साक्षी भाव से उसकी कीर्ति का ध्वज ऊँचा फहराया।"

जीवन का प्रकाश 'गुरु-उपदेश' है। जीवन की शक्ति 'भगवन्नाम' है। जीवन में सफलता का रहस्य 'भगवद्-विश्वास' है। जीवन का आधार 'धर्म' है। जीवन की सम्पत्ति 'सद्गुण' है। सर्वोत्कृष्ट निधि 'भगवद्-भक्ति' है। शान्ति तथा परमानन्द की कुंजी 'ध्यान' है। परम कृतार्थता का जीवन 'दिव्य जीवन' है। जो-कुछ कहा गया है, उस पर विचार करें, उसके कार्य को भली-भाँति समझें, अपने दैनिक जीवन में उनका अनुसरण करें तथा इस भाँति सौभाग्यशाली बनें!

-स्वामी चिदानन्द

६. गुरुदेव : एक आदर्श-संन्यास में

अर्चनीय, वन्दनीय, सर्वप्रिय, परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज को स्नेहिल प्रणाम ! परब्रह्म में प्रतिष्ठित एक महान् तत्त्वज्ञ स्वामी जी महाराज ने इस अवस्था को सहज ही प्राप्त नहीं कर लिया। कठोर संघर्ष, उग्र तपश्चर्या, महान् प्रायश्चित्त, अपूर्व योग-साधना, गहन ध्यान, अनन्य भक्ति और परमात्मा के लिए

हार्दिक समर्पण भाव से उन्होंने यह स्थिति प्राप्त की। "मुझे यथाशक्ति प्रयास करना है; किन्तु लक्ष्य प्राप्ति में परिणाम पूर्णतया सर्वज्ञ ईश्वर की दिव्य इच्छा पर निर्भर है। अतः आत्यन्तिक विश्लेषण में मेरे प्रयास शून्यवत् हैं। मेरी उपलब्धियाँ शत-प्रतिशत परम पिता परमेश्वर की दैवी इच्छा के अधीन हैं।"

प्रगाढ़ एकाग्रता (गम्भीरता) और घोर आत्मोत्कर्ष के वे अद्‌भुत प्रतिरूप थे और इस सत्य का भी उन्हें स्पष्ट संज्ञान था कि सर्वस्व प्रभु के हाथ में है। मानवीय प्रयास सफल नहीं होते यदि दैवी इच्छा प्रबल न हो तो, अन्ततः जय उसी की है। व्यक्तिगत आभ्यन्तर संस्थिति के रूप में उन्होंने इस भाव को गुप्त रखा; क्योंकि यदि वे कहते-"सब-कुछ भगवान् के हाथ में है," तो हम जैसे अपरिपक्व लोग आलसी हो जाते जो सदा कोई-न-कोई सरल राह ढूँढ़ते-"नहीं, नहीं, वही सब-कुछ करेगा, हमें कुछ करने की आवश्यकता नहीं है।"

क्योंकि सर्वोच्च आध्यात्मिक तथ्यों के सूक्ष्मतर आन्तरिक सत्य को समझना सरल नहीं है। अतः वे सदा कहा करते थे-"नहीं, नहीं, नहीं, आत्म-प्रयास। तुम्हें सदा संघर्ष करना चाहिए। बिना संघर्ष अथवा प्रयास के कुछ भी प्राप्त नहीं होगा", अर्थात् आत्यन्तिक सत्य को पूर्ण रूप से जानने के लिए कर्म तो करना ही होगा।

ॐ ॐ ॐ

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी का एक लक्ष्य था-लौकिक कल्याण! अज्ञान की निद्रा से सबको उठ जाना चाहिए। सब जागें और ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति का आनन्द लें; क्योंकि अज्ञान की प्रगाढ़ निद्रा अनेक दुःखों का मूल कारण है।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी एक महान् कर्मयोगी थे। हमारे समय में वे मानवता के कल्याण में रत अनन्य, स्वार्थरहित निष्काम कार्यकर्ताओं में एक थे। उन्होंने अद्‌भुत, अनुपम, अपूर्व कार्य किया। उन्होंने तीन सौ पुस्तकें लिखीं। विशाल आश्रम बनवाया। उन्होंने असंख्य विचारगोष्ठियाँ करवायीं और विश्व-भर में तथा समस्त भारत में दिव्य जीवन संघ की शाखाएँ खुलवायीं। हमें उनकी सक्रियता देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

पुनरपि, हमें इतना भी ज्ञात है कि वे कीर्तन-सम्राट् थे। भगवन्नाम संकीर्तन के साथ नृत्य करते हुए गाने में विशेष आनन्द लेते थे। 'जपयोग' पुस्तक भी उनके द्वारा लिखी गयी। वे एक महान् भक्त भी थे। सब काम करते हुए वे उस परम देव की स्तुति करते रहते। उनका जीवन, उनकी गतिविधियाँ, कर्म, परमात्मा में लगन तथा सूक्ष्मतम कार्य भी केवल मात्र परमेश्वर की आराधना से ओत-प्रोत था। उनके अनुसार जीवन भी एक महान् पूजा है। दर्शन, श्रवण, सम्भाषण, श्वसन, प्राणन, स्पर्शन, आस्वादन, तिष्ठन, स्वप्न और गमन-सब उस प्रभु की महिमा-मण्डित आराधना के रूप में उसी को समर्पित था।

हमारे ज्ञान में आने से पूर्व वे स्वर्गाश्रम में घोर साधना और एकान्तवास का जीवन यापन करते रहे। महान् ध्यानयोगी, मौन अन्तर्मुखी, सर्वदा प्रभु-चिन्तन में लीन, वे सदा अपने कुटीर के द्वार बन्द करके ध्यान, केवल ध्यान में मस्त रहते थे। उन्होंने एक पुस्तक लिखी - 'एकाग्रता और ध्यान'। 'ध्यानयोग' पुस्तक भी उन्हीं के द्वारा रचित है। वे कहते कि ज्ञानोद्दीपन के लिए अथवा ज्ञान-प्रकाश की प्राप्ति के लिए ध्यान ही एकमात्र साधन है। अपने सभी सहयोगियों को उन्होंने ध्यान हेतु प्रेरित किया। महर्षि पतंजलि के योग-सूत्रों में वर्णित ध्यानयोग के सूत्रों की व्याख्या, टीका और अनुवाद को उन्होंने पुस्तक का स्वरूप दिया। वे रहस्यमय ध्यानयोगी थे। इसी के साथ, जगद्‌गुरु आदि शंकराचार्य की परम्परा के वे कैवल्य अद्वैत वेदान्तिन् भी थे। वेदान्ती आश्रमों में, चाहे वे ऋषिकेश में हों अथवा हरिद्वार में, सभी लोग उन्हें वेदान्तिक स्वरूप मानते थे। वे सब-कुछ होते हुए भी मूलत: योगी थे, जिन्होंने दिव्य सत्ता से एकत्व प्राप्त किया और घोषणा की कि सबके जीवन का अन्तिम लक्ष्य यही है। उस एकत्व की प्राप्ति के उन्होंने सब साधन और पथ प्रशस्त किये।

ॐ ॐ ॐ

अन्य महत्त्वपूर्ण उपदेशों के साथ-साथ गुरुदेव ने हमें सब धर्मों की मौलिक एकता का स्वरूप बताया। नित्यकर्म, संस्कारविधा और पूजा-स्थल का बाह्य निर्माणशिल्प तथा पुरोहितों की विभिन्न धर्मों में भिन्न-भिन्न वेशभूषा का ज्ञान भी गुरुदेव ने कराया। ये सब धर्म पृथक् होते हुए भी मौलिक एकता को प्रभावित नहीं करते। परमेश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वशक्तिमत्ता और सर्वज्ञता तथा उस अलौकिक सत्ता की पूर्णता का सभी धर्म एक स्वर से गान करते हैं।

ॐ ॐ ॐ

कुटीर से कार्यालय में आने पर गुरुदेव स्वयं को विविध प्रकार के क्रिया-कलापों में व्यस्त रखते थे। वे आगन्तुकों से मिलते, उनका मनोरंजन करते, मुक्तहस्त आध्यात्मिक साहित्य वितरित करते, उनकी समस्याओं को ध्यानपूर्वक, धैर्यपूर्वक सुनते, समस्याएँ सुलझाते और यदि आगन्तुक विषाद में होते, तो उन्हें सान्त्वना देते थे। ये सब कार्य वे एक पितामह की भाँति करते। पुनरपि, हम देखते हैं कि वे सतत वैश्विक सत्ता में लीन रहते। वे अचल, अनवरत रूप से परम देव में वास करते। वे द्वैत-परिमाण के समकालीन आश्चर्य थे।

इसका महत्त्व यह है कि उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि आज के कलियुग में भी, जहाँ मानवता पतन की ओर अग्रसर हो रही है, ऐसा सम्भव है। १९५० में अपने अपूर्व प्रेरक, राष्ट्र को स्तम्भित कर देने वाले आध्यात्मिक भारत-भ्रमण के समय भी हमने अवलोकन किया कि व्यस्त कार्यकलापों के होते हुए भी वे सदा वैश्विक सत्ता परम ब्रह्म में खोये रहते थे।

स्वामी शिवानन्द जी का बाह्य व्यक्तित्व निरपेक्ष परिधि में क्रियारत था। आन्तरिक सत्य, जिसने ब्रौक्य की अनुभूति का आनन्द प्राप्त कर लिया था और ब्रह्म-चेतना के साथ एकाकार हो गया था। केवल वही सत्य है, सभी अभिव्यक्तियाँ मिथ्या हैं-इस तथ्य के प्रति उनकी आभ्यन्तर स्थिति कभी प्रतिकूल नहीं हुई और उस पर बाह्य परिवेश का कोई प्रभाव न पड़ा। अतः उनकी चेतना और उनका व्यक्तित्व आधुनिक युग में वास्तव में ही एक चमत्कार, आश्चर्य थे।

ॐ ॐ ॐ

स्वामी शिवानन्द जी का परम पिता परमात्मा में अटूट विश्वास दर्शनीय था। पूर्ण, सम्पूर्ण। वे हमारे समक्ष एक साक्षात् दृष्टान्त के रूप में थे। उनकी अहेतुकी कृपा हम सब पर बनी रहे !